REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 7 | APRIL - 2026

मौर्यकालीन कृषिव्यवस्था

डॉ. शालिनी कुमारी
इतिहास विभाग
एस.एन.एस.आर.के.एस.कॉलेज, सहरसा (बिहार)

सारांश–

प्राचीन काल से ही भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है और यहाँ कृषकों की संख्या हमेशा से अधिक रही है। कृषक अपना सारा कार्य समय खेती में लगाते थे। कृषक समाज पवित्र और अवध्य माना जाता था। मौर्य साम्राज्य की आर्थिक संरचना का प्रमुख आधार कृषि थी जिससे न केवल जनसंख्या की आवश्यकताएँ पुरी होती थी, बल्कि राज्य का राजस्व भी सुनिश्चित होता था। मौर्य शासकों द्वारा कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए कई प्रमुख कार्य किये गये जैसे नहरों का निर्माण, जल प्रबंधन और सिचाई प्रणाली में विकास इसके अलावे किसानों की स्थिति कृषि श्रमिकों में सुधार कृषि से जुड़े व्यापार में विस्तार की भी व्यवस्था की गई। मौर्य काल के आर्थिक सुधार में कृषि ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की इस भूमिका ने वहाँ की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की नीव को सुदृढ़ बनाया।

मुख्य शब्द– आर्थिक संरचना, राज्य का राजस्व, जल प्रबंधन।

प्रस्तावना–

मौर्यवंश के शासको ने सम्पूर्ण भारत पर अधिकार कर भारत में पहली बार राजनीतिक एकता की स्थापना की। इस राजनीतिक एकता एवं स्थिरता ने देश की आर्थिक उन्नति में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की मौर्यकालीन भारत का आर्थिक आधार कृषि था। मेगस्थनीज के अनुसार भारतीय जातियों में किसान का दूसरा स्थान था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कृषि पर विस्तार से वर्णन मिलता है।

मौर्य युग में साल में तीन फसले पैदा की जाती थी। रबी, खरीफ, जायद जिसे हैमन ग्रैष्मिक, केदार भी कहा जाता था। कर्मकरो और सिचाई की पानी उपलब्धि के अनुसार ये तीन फसल पैदा की जाती थी। कैसी भूमि में कौन सी फसल बोई जाए इसका वर्णन कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिलता है।

मेगस्थनीज के अनुसार इस समय सम्पूर्ण भारत में अनाज, ज्वार अनेक प्रकार की दाले, चावल एवं बहुत से खाद्योपयोगी पौधे उत्पन्न होते थे। यहाँ वर्ष में दो बार वर्षा होती थीं। दूसरी गर्मी में जिसमें तिल और ज्वार की उत्पादन की जाती थी। अतः भारतवासी वर्ष में दो बार फसल काटते थे।

अगर एक फसल बर्बाद भी हो जाती तो दूसरी फसल सफल हो जाती थी। इसके अलावे कई प्रकार के शाक, सब्जी कन्द, मूल फल, फूल की भी उत्पादन की जाती थी। मिर्च, अदरक, सरसो, धनिया जीरा नींबू, आँवला जामुन, कटहल, आम, बेरी, अनार इत्यादि ईख की पैदावार भी होती थी। जिससे गुड़ तैयार किया जाता था। इसके अलावे बहुमूल्य वृक्षो की भी जानकारी कौटिल्य के अर्थशास्त्र से मिलती है। जिसमें शाक, तिनिश, अर्जुन, खैर, सरल, सर्ज कश आम इत्यादि थे।

कृषि के लिए भूमि की तैयारी करने की व्यवस्था भी मिला जुला कर बहुत अच्छी थीं। हलो और बैलों का प्रयोग किया जाता था। दासो श्रमिकों, कैदियों द्वारा उस पर बीज बुआई की जाती थी। कृषि कार्य में सहायता के लिए कर्मार, कट्टाक (कुट्टी काटने वाला) मेदक (कुँआ खोदने वाला) सर्पग्राही (साँप पकड़ने वाला) लोगों से सहयोग लिया जाता था। इन सभी मददगारो को कार्य के अनुसार मासिक वेतन भोजन पानी आदि की सुविधा दी जाती थी।

कृषि कार्य के मुख्य अधिकारी को सीताध्यक्ष कहा जाता था। सीताध्यक्ष सभी प्रकार के फल, फूल, कन्द मूल आदि को संग्रह करता था। जिस भूमि पर सीताध्यक्ष का नियंत्रण नहीं था।

उस पर कृषक खेती किया करते थे। इन पर किसानों का भूमि पर अधिकार केवल अपने जीवनकाल तक ही होता था। खेती के लिए जो कृषि योग्य भूमि किसी किसान को दे दी गई हो और वह स्वयं खेती ना करे तो वह खेत उस से लेकर किसी अन्य को दे दी जाती थी। इस व्यवस्था का मुख्य कारण था जो व्यक्ति कृषियोग्य भूमि पर खेती नहीं करेगा तो वह राजा को कर कैसे दे देगा।

किसानों द्वारा राजा को जल कर भी दिया जाता था। खेती की उन्नति तथा उत्पादन वृद्धि के प्रति राज्य इतना सचते था कि यदि किसी किसान का पानी टूट जाने का लापरवाही से दूसरे की फसल बर्बाद होती थ तो उसे राज्य की ओर से दंड दिया जाता था। उत्कृष्ट फसलो की प्राप्ति के लिए बीजों को तैयार करने एवं विभिन्न खादों के बारे में धान के बीजो को सात रात रखा जाता था, ओस में और दिन में उसे सुखाया जाता था। ईख को रोपने से पहले कन्दो के छेदो पर मधु और घृत का लेप लगाया जाता था। आम, कटहल आदि के बीज को रोपाई के पहले उस गड्ढे में घास फूस जलाकर गर्मी पहुँचाई जाती थी। फिर गोबर, पशुओं का हड्डी डाला जाता था। फसल अंकुर निकलने पर नन्ही ताजी मछलियों से सींचा जाता था। बीज बोते समय कुछ मंत्रों का उच्चारण भी किया जाता था। "मैं सर्वदा नमस्कार करता हूँ कृषिकर्म की अधिष्ठात्री सीता देवी हमारे इस बीज की और धन की वृद्धि करें।"

मौर्य काल में खेती की सिचाई की अच्छी खासी व्यवस्था की गई थी। जिसकी जानकारी कौटिल्य ने दी है। हाथों से पानी निकालकर सिचाई करना। कंधे का प्रयोग कर सिचाई करना। रहट के माध्यम से सिचाई करना। नदी तालाब, सर कूप के द्वारा सिचाई करना। खारवेल ने कलिंग में एक पुरानी नहर का विस्तार किया और रूद्रदमन ने सौराष्ट्र में सुदर्शन झील की मरम्मत कराई। नहरे कुछ सरोवरों का भी निर्माण किया गया। इसके अलावे वर्षा सिचाई की भी उपेक्षा नहीं की जाती थी।

किस ऋतु में किन प्रदेशों में कितनी वर्षा होती है इसका ठीक–ठीक ज्ञान प्राप्त कर खेती के लिए उपयोग किया जाता था। वर्षा को मापने के लिए विशेष प्रकार के कुण्ड बनाए जाते थे। वर्षा किस भाग में कितनी होनी चाहिए कब कितनी वर्षा खेती के लिए लाभकर है इसका कौटिल्य ने वर्णन किया है।

अच्छी वर्षा के लिए ईश्वर से प्रार्थना की जाती थी। कौटिल्य के अनुसार दुर्भिक्ष से बचाव की भी व्यवस्था की जाती थी। राजा का यह परम कर्त्तव्य होता था। फसल को सुरक्षा प्रदान करे।

कृषि में उत्पन्न फसलों को सुरक्षित रखने का कार्य भार कोष्ठागाराध्यक्ष को दिया जाता था। फसल को ठीक से नाप तौल कर कोठार में रखवाया जाता था। यह कोठार ऊँचे स्थान पर बनवाया जाता था। गुड आदि को सुरक्षित रखने का स्थान ठंडा और साफ स्वच्छ होता था। तेल, घी रखने के लिए मिट्टी के कुंड तथा काष्ट के बने पात्र होते थे।

राजकीय आय में कृषि का योगदान होता था। मौर्य युग में राज की भूमि दो प्रकार की होती थी सीता और भाग। जो भूमि राज्य की अपनी संम्पत्ति हो और जिस पर राज्य की ओर से ही खेती की जाती हो उसकी आय को सीता कहते थे।

जिस भूमि पर अपने श्रम से स्वतंत्र रूप से खेती की जाती थी ये राज्य की भूमि नहीं होने कारण कोई वेतन आदि प्राप्त नहीं करते थे। राज्य इनसे 'भाग' वसूल किया करते थे। इसके अतिरिक्त फल फूलों के उद्यान, शाक सब्जी के बगीचे से राज्य को जो आय होती थी उसे सेतु कहते थे।

किसानों से मांगे जाने वाली भू–राजस्व का उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति पर सीधा प्रभाव पड़ता था। पूर्व की अपेक्षा मौर्यकाल में माँगे जाने वाले करो की संख्या और दर बहुत अधिक थी। इसका प्रमाण 'अर्थशास्त्र' से मिलता है, जिसमें राज्य की आय के साधनों के अन्तर्गत करो की सूची प्राप्त होती है। विदेशी विवरणों से भी इस काल में किसानों पर लगने वाले करों की जानकारी मिलती है। 'एरियन' के अनुसार **"किसान भूमि जोतते है कर देते है और स्वतंत्र रूप से रहते है।"**

डाथोडीरसः– के अनुसार "किसान राजा को भूमि कर देते है क्योंकि भारत की सम्पूर्ण भूमि का स्वामी राजा है।" किसी को भी व्यक्तिगत भूमि रखने का अधिकार नहीं था। भू–राजस्व के अतिरिक्त कृषि उत्पादन का एक चौथाई राजकीय खजाने में जमा करते थे। अर्थशास्त्र के अनुसार ग्राम के 5 से 10 अधिकारियों को यह निर्देश दिया गया था कि वे कुछ रजिस्टर बनाए जिसमें कर मुक्त ग्राम, आयुधीय ग्राम की पुरी जानकारी एकत्रित करे तथा उन ग्रामों के बारे में जानकारी करे जो विष्टि के रूप में कुष्य दुग्ध, अनाज, पशु हिरण्य के रूप में कर दिया करते थे। इन रजिस्टारों में ग्राम की सीमाएं मैदान, कृषि योग्य व कृषि अयोग्य भूमि आदि की सम्पूर्ण जानकारी लिखी जाती थी। इन गोप अधिकारियों का यह भी कार्य था कि ग्राम की जनसंख्या की सूची तैयार करके यह उल्लिखित करे कि कौन सा घर कर योग्य है और कौन सा कर मुक्त है। किसानों की व्यक्तिगत सम्पत्ति पर भू–राजस्व लिया जाता था। इसके अतिरिक्त "पिण्डकर" का उल्लेख भी किया गया है जो गाँव पर सामूहिक रूप से लगाया जाने वाला कर था। जो भू–राजस्व से भिन्न था। कृषि के अतिरिक्त सामूहिक रूप से उपयोग की जाने वाली भूमि, चारागाह, बागो सड़को आदि पर भी कर लिया जाता था। "अर्थशास्त्र" के अनुसार गोप को गाँव की भूमि को तीन भागों में बाँटना चाहिए था। ऊँची भूमि, नीची भूमि और अन्य भूमि। इन्हीं के आधार पर अलग अलग कर का निर्धारण करना चाहिए। बुद्ध के जन्म स्थान लुम्बनी दन्त में अशोक ने भू–राजस्व की दर कम करके उपज 1/8 भाग कर दिया था क्योंकि राजा द्वारा कुछ विशेष परिस्थितियों में कर की दर कम भी की जाती थी।

दुर्भिक्ष पड़ने पर भू–राजस्व वसूल नहीं किया जाता था। किसानों से अनेक कर वसूल किये जाते थे। जैसे भाग, बलि, हिरण्य, उदक, प्रणय आदि। भू–राजस्व को प्रमुख स्त्रोत था। अर्थशास्त्र के अनुसार बलि उत्पादन पर लगने वाला छोटा मोटा आवश्यक कर था। **हिरण्य** यह **किसानों** पर लगाने वाला अनियमित कर था। **उदक** यह जलकर था। **'प्रणय'** कर राज्य पर आर्थिक संकट की स्थिति में किसानों व्यापारियों शिल्पियों और पशुपालकों से वसूला जाने वाला कर था। किसानों से यह उपज का 1/4 से 1/3 तक लिया जाता था। कौटिल्य ने राजा को यह निर्देश दिया था कि वह प्रजा से उतना ही कर ले जितना वे चुका सके। राजा को देश व काल को ध्यान में रख कर ही लोगों पर कर आरोपित करना चाहिए क्योंकि राज्य को कर तभी प्राप्त होगें जब प्रजा उत्पादन करेगी। निःसंदेह कर लेते समय मौर्य शासक जनता के भावो एवं उनकी क्षमता का पूरा ध्यान रखते थे। अतः स्पष्ट है कि इस काल में किसान अन्न धन और श्रम तीनो प्रकार से राज्य को 'कर' देते थे।

कृषि विस्तार के दौरान चारागाहो शिकारियों ने जंगलो को साफ करने और खेती का विस्तार करने में भी बड़ा योगदान दिया था। इसके अलावे भी कृषि विस्तार में पशुपालको, चारागाहों, शिफारियों का योगदान रहा। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार "कृषि और पशु पालन एक दूसरे पर पूरी तरह निर्भर है।"1

खेती के लिए सबसे जरूरी काम बैलो द्वारा किया जाता था। खेत जुताई गुड़ाई में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। मौर्य काल में रसायनिक खाद नहीं थी इसलिए पशुओं का गोबर और मूत्र ही मिट्टी की उर्वरक शक्ति बढ़ाने का मुख्य स्त्रोत था। पशुपालक अपने पशुओं को खेत में चराते थे जिससे मिट्टी को प्राकृतिक रूप से खाद मिलती थी। फसल कटने के बाद अनाज को खेत से खलिहान तक और फिर मंडी या सरकारी गोदाम तक पहुँचखने का काम पशुपालकों के बैलगाड़ियों द्वारा ही किया जाता था। इससे व्यापार और वितरण आसान हो गया।

पशुपालको से प्राप्त उत्पाद जैसे दूध, दही, और घी किसानों के लिए आर्थिक आय का साधन था। अगर कभी आकाल पड़ता था खेती खराब होती थी पशु ही किसानों के सहारा होते थे। मौर्य काल में "गौअध्यक्ष" नाम का एक अधिकारी होता था जो पशुधन की देखभाल और उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखता था। ताकि कृषि व्यवस्था प्रभावित ना हो सके। खेती के लिए जरूरी रस्सी, चमड़े के जूते खेती के औजार बांधने के लिए चमड़े भी पशुपालन से ही आता था। मौर्य काल में पशुपालक सिर्फ जानवर चराने वाले ही नहीं थे बल्कि वे कृषि तकनिक का एक जीता जागता हिस्सा था। उनके बिना मौर्य साम्राज्य की विशाल खेती अनाज का भंडार संभव नहीं होता।

निष्कर्षः –

आधुनिक युग में कृषि का विस्तार करने उत्पादन बढ़ाने खेती करने के कई साधन मौजूद है, परंतु आज भी प्राचीन परम्परागत साधनों का प्रयोग जो मौर्य काल में प्रचलित थी। कृषि के लिये वो आज भी अपनायी

जाती है। हालांकि की बढ़ती जनसंख्या के कारण नदी, तलाबों, नहरो की संख्या सीमित होती जा रही है। लोग आधुनिकता की ओर बहुत तेजी से बढ़ते जा रहे है।

जिससे कृषि व्यवस्था फसल उत्पादन पर इसका बहुत बुरा असर पड़ा है। मनुष्यों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का दुर्व्यहार करने से प्राकृतिक नदी नाले नहरे सुखते जा रहे है। मौर्यकाल मैं इन प्राकृतिक संसाधनो पर ही कृषि और देश की आर्थिक व्यवस्था निर्भर थी क्योंकि कृषि ही आय का मुख्य स्त्रोत हुआ करता था।

सन्दर्भ सूची

1. कौटिल्य अर्थशास्त्र–2/24 पृष्ट 187.
2. कौटिल्य अर्थशास्त्र 3/9.
3. आचार्य दीपकर कौटिल्य कालीन भारत, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ पृ0–136.
4. पाण्डेय, डॉ. विमल चंद्र, प्राचीन भारत का इतिहास (1987–88) केदार नाथ रामनाथ, मेरठ पेज 162.
5. द्विवेदी डॉ. पूणेश्वरी प्राचीन भारत में कृषि व्यवस्था (1993) इलाहाबाद
6. सत्य केतु विद्यालंकार मौर्य साम्राज्य इतिहास 2014 इण्डियन प्रेस श्री सरस्वती सदन, इलाहाबाद।
7.शर्मा रामशरण, प्राचीन भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय पेज– 197.